मेघदूत विषयक वक्तव्य: 03

मेघदूत (पूर्व मेघ) 11 से 15 श्लोक अनुवाद सहित

(ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय के संस्कृत ऑनर्स प्रथम वर्षीय छात्र-छात्राओं के द्वितीय पत्र की प्रथम अन्विति के लिए। मेघदूत के पूर्व मेघ के 1 से 25 तक श्लोकों का हिंदी अनुवाद विषयक पाठ्य सामग्री)

पाठ्य संकलनकर्त्ता: डॉ. विकास सिंह, संस्कृत विभागाध्यक्ष, मारवाड़ी कॉलेज, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार।

(11)

कर्तुं यच्च प्रभवति महीमुच्छिलीन्ध्रामवन्ध्यां

तच्छ्रुत्वा ते श्रवणसुभगं गर्जितं मानसोत्का:।

आकैलासाद्विसकिसलयच्छेदपाथेयवन्त:

सैपत्स्यन्ते नभसि भवती राजहंसा: सहाया:।।

अर्थ:- जिसके प्रभाव से पृथ्वी शिलीन्ध्र पुष्पों से युक्त होती है और सफल होती है, तुम्हारे उस सुहावने गर्जन को जब कमलवनों में राजहंस सुनेंगे, तब मानसरोवर जाने की उत्कंठा से अपनी चोंच में मृणाल के अग्रखंड का पथ-भोजन लेकर वे कैलास तक के लिए आकाश में तुम्हारे साथी बन जाएँगे।

(12)

आपृच्छस्व प्रियसखममुं तुग़मालिग़्च शैलं

वन्द्यै: पुंसां रघुपतिपदैरकिङ़तं मेखलासु।

काले काले भवति भवतो यस्य संयोगमेत्य

स्नेहव्यक्तिश्चिरविरहजं मुञ्चतो वाष्पमुष्णम्।।

अर्थः- अब अपने प्यारे सखा इस ऊँचे पर्वत से गले मिलकर विदा लो जिसकी ढालू चट्टानों पर लोगों से वन्दनीय रघुपति के चरणों की छाप लगी है, और जो समय-समय पर तुम्हारा सम्पर्क मिलने के कारण लम्बे विरह के तप्त आँसू बहाकर अपना स्नेह प्रकट करता रहता है।

(13)

मार्गं तावच्छृणु कथयतस्त्वत्प्रयाणानुरूपं

संदेशं मे तदनु जलद! श्रोष्यसि श्रोत्रपेयम्।

खिन्नः खिन्नः शिखरिषु पदं न्यस्य गन्तासि यत्र

क्षीणःक्षीणः परिलघु पयः स्त्रोतसां चोपभुज्य।

अर्थः- हे मेघ, पहले तो अपनी यात्रा के लिए अनुकूल मार्ग मेरे शब्दों में सुनो। थक-थककर जिन पर्वतों के शिखरों पर पैर टेकते हुए, और बार-बार तनक्षीण होकर जिन सोतों का हलका जल पीते हुए तुम जाओगे। पीछे, मेरा यह सन्देश सुनना जो कानों से पीने योग्य है।

(14)

अद्रेः श्रृंगं हरति पवनः किंस्विदित्युन्मुखीभि-

र्दृष्टोत्साहश्चकितचकितं मुग्धसिद्धङ्गनाभिः।

स्नानादस्मात्सरसनिचुलादुत्पतोदङ्मुखः खं

दिङ्नागानां पथि परिहरन्थूलहस्तावलेपान्।।

अर्थः- क्या वायु कहीं पर्वत की चोटी ही उड़ाये लिये जाती है, इस आशंका से भोली बालाएँ ऊपर मुँह करके तुम्हारा पराक्रम चकि हो-होकर देखेंगी। इस स्थान से जहाँ बेंत के हरे पेड़ हैं, तुम आकाश में उड़ते हुए मार्ग में अड़े दिग्गजों के स्थूल शुंडों का आघात बचाते हुए उत्तर की ओर मुँह करके जाना।

(15)

रत्नच्छायाव्यतिकर इव प्रेक्ष्यमेतत्पुरस्ताः

द्वल्मीकाग्रात्प्रभवति धनुः खण्डमाखण्डलस्य।

येन श्यामं वपुरतितरां कान्तिमापत्स्यते ते

बर्हेणेव स्फुरितरूचिना गोपवेषस्य विष्णोः।।

अर्थः- चम-चम करते रत्नों की झिलमिल ज्योति-सा जो सामने दीखता है, इन्द्र का वह धनुखंड बाँबी की चोटी से निकल रहा है। उससे तुम्हारा साँवला शरीर और भी अधिक खिल उठेगा, जैसे झलकती हुई मोरशिखा से गोपाल वेशधारी कृष्ण का शरीर सज गया था।